स्रोत

विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी फीचर्स

जीवनी

श्वेत बौनों से श्याम विवर तक : चन्द्रशेखर सुब्रमण्यन

जयन्त वी. नार्लीकर

नोबल पुरस्कार विजेता खगोल-भौतिकशास्त्री प्रोफेसर एस. चन्द्रशेखर का निधन 21 अगस्त 1995 को शिकागो में हो गया। वे शिकागो विश्वविद्यालय में कार्यरत थे। यह लेख उस व्यक्ति व उसकी उपलब्धियों को एक श्रद्धांजलि है।

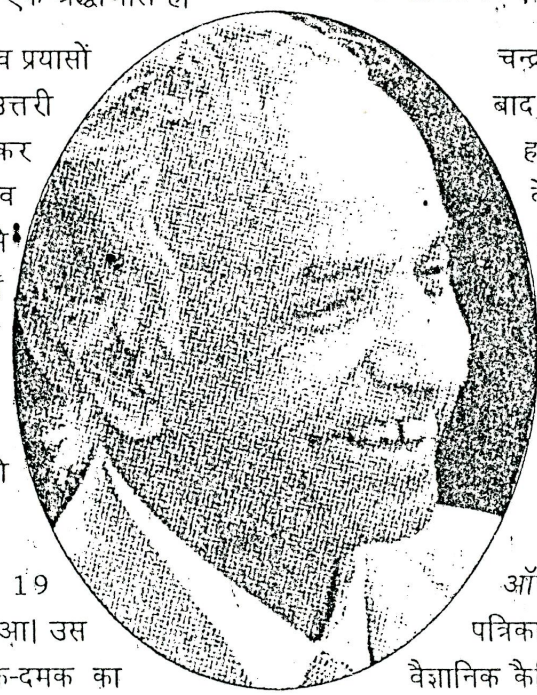

लम्बे समय से खगोलशास्त्र मानव प्रयासों में अग्रणी रहा है। एशिया और उत्तरी अफ्रीका की प्राचीन सभ्यताओं से लेकर यूनानी सभ्यता के सुनहरे काल तक व आगे चलकर भारत में आर्यभट से भास्कर तक; उसके बाद यूरोप में कॉपर्निकस, गैलीलियो और केप्लर व आधुनिक भौतिकी के ऊषाकाल में आइज़ैक न्यूटन तक; ब्रह्माण्ड को लेकर मानव की जिज्ञासा, प्रकृति को समझने की मूल प्रेरणा रही है।

सुब्रमण्यन चन्द्रशेखर का जन्म 19 अक्टूबर 1910 को लाहौर में हुआ। उस समय तक खगोलशास्त्र की चमक-दमक का ज़माना लद चुका था। वैज्ञानिक अनुसंधान की प्राथमिकताएं बदल चुकी थीं। अब ऊष्मा-गतिकी, विद्युत चुम्बकीय सिद्धांत, विशिष्ट सापेक्षता तथा नवोदित क्वान्टम यांत्रिकी का बोलबाला था। चन्द्रशेखर ने ऐसी परिस्थिति में, अनजाने में ही; खगोलशास्त्र में फिर से वैज्ञानिक दिलचस्पी पैदा करने में अग्रणी भूमिका निभाई।

चन्द्रा (जैसा कि चन्द्रशेखर आम तौर पर जाने जाते थे) के पिता सी. सुब्रमण्यन अय्यर रेलवे में नौकरी करते थे। उनके चाचा चन्द्रशेखर वेंकटरामन 1928 में नोबल पुरस्कार से सम्मानित किए गए।

चन्द्रा की शुरूआती शिक्षा घर पर ही हुई। बाद में वे मद्रास में ट्रिप्लीकेन के *हिन्दू हाईस्कूल* में पढ़े। आगे की शिक्षा के लिए वे मद्रास के *प्रेसीडेंसी कॉलेज* में दाखिल हुए। भौतिक शास्त्र में उनके भावी योगदान के संकेत उनकी स्नातक-कक्षाओं की पढ़ाई के समय से ही मिलने लगे थे। चन्द्रा ने अपना पहला शोध-पर्चा 19 वर्ष की उम्र में लिखा - *कॉम्प्टन बिखराव और नई सांख्यिकी*।

यह पर्चा लंदन से प्रकाशित *प्रोसीडिंग्स ऑफ रॉयल सोसाइटी* जैसी प्रतिष्ठित शोध पत्रिका में प्रकाशित हुआ। इसी के साथ उनका वैज्ञानिक कैरियर शुरू हुआ। परन्तु उस ज़माने में 'इंडियन सिविल सेवा' में भर्ती होने से ही 'सफल' भारतीय होने की पहचान होती थी। यदि कैम्ब्रिज या ऑक्सफर्ड में शिक्षा के ज़रिए यही काम हो, तो सोने में सुहागा। परन्तु चन्द्रा कैम्ब्रिज अलग कारणों से जाना चाहते थे। उनके लिए आकर्षण एक ऐसे वातावरण में अनुसंधान करने का था जहां थी; रदरफोर्ड के नेतृत्व में फलती-फूलती कैवेण्डिश प्रयोगशाला, फाउलर,

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (डी.एस.टी.) की एक परियोजना

संपादन एवं संचालनः एकलव्य, ई-1/25 अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016 फोनः 563 380 फैक्सः 0755-510621

(स्रोत में छपे लेखों के विचार लेखकों के हैं। एकलव्य या एन.सी.एस.टी.सी. का इन विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है।)

एडिंग्टन व डिराक जैसे प्रतिष्ठित भौतिकशास्त्र.....। कुल मिलाकर एक ऐसा माहौल जिसमें भौतिकशास्त्र की नई दिशाएं खुल रही थीं।

उस समय भी और पूरे कैरियर के दौरान भी, चन्द्रा की प्राथमिकता भौतिकी और खगोल भौतिकी की समस्याओं को हल करने के लिए; गणित का पैना औज़ार तैयार करने की रही। '30 में इंग्लैण्ड की स्टीमर यात्रा के दौरान उन्होंने एक ऐसी ही समस्या का हल ढूंढने का निश्चय किया। इस समस्या के तार्किक समाधान ने उन्हें कैरियर के शुरूआती दौर में काफी प्रसिद्धि दिलाई। समस्या का सम्बंध श्वेत बौने तारों से था।

श्वेत बौने

एडिंग्टन की पुस्तक *द इंटर्नल कॉस्टिट्यूशन ऑफ स्टार्स* (सितारों का आंतरिक संघटन) ने तारों की संरचना समझने के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी। एडिंग्टन ने सूरज जैसे किसी तारे के सन्दर्भ में; आंतरिक संतुलन व ऊष्मा के स्थानांतरण की मूलभूत समीकरण तैयार कर दी थीं और यह निष्कर्ष निकाला था कि तारों को ऊर्जा हाइड्रोजन तत्व के हीलियम में तब्दील होने की प्रक्रिया से मिलती है। इसी ऊर्जा की बदौलत तारे चमकते हैं और गुरुत्वाकर्षण के दबाव से पिचकते नहीं हैं। अर्थात किसी तारे की आंतरिक संरचना उसकी संहति से निर्धारित होती है। इसी से यह भी निर्धारित होता है कि किसी तारे के केन्द्र से सतह की ओर तापमान और दबाव का वितरण किस तरह होगा। इस स्थिर वितरण को सम्भाले रखने का काम तारे के अन्दरूनी भाग में उत्पन्न हो रही ऊर्जा द्वारा किया जाता है।

यह चित्र सूरज जैसे तारों के लिए तो ठीक बैठता है, जिनके केन्द्रीय कोर में ताप नाभिकीय ऊर्जा स्रोत स्थित है। परन्तु ऊर्जा के स्रोत-विहीन तारों का क्या होगा! श्वेत बौने तारे इसी प्रकार के तारे हैं। ये तारे सूरज़ की तुलना में बहुत धुंधले और छोटे होते हैं। किसी श्वेत बौने तारे का व्यास सूरज के व्यास से कई गुना कम होता है। परन्तु यह भी तो है कि इन तारों की संहति आखिर कितनी हो सकती है?

आर. एच. फाउलर के अन्वेषणों से पता चल चुका था कि यदि किसी तारे में आंतरिक ऊर्जा का पर्याप्त दबाव न हो तो वह सिकुड़ने लगेगा और तब तक सिकुड़ता जाएगा जब तक कि एक नए किस्म का दबाव इस सिकुड़न को रोकने न लगे। यह दबाव 'क्वान्टम डीजनरेसी दबाव' कहा गया। यह दबाव तब उत्पन्न होता है जब तारे में मौजूद इलेक्ट्रॉन इतने ठसाठस पैक हो जाते हैं कि स्थूल विश्व के नियम के बजाय क्वान्टम यांत्रिकी के नियम क्रियाशील हो जाते हैं। पॉली द्वारा प्रतिपादित प्रतिबन्ध नियमों के मुताबिक, किसी भी निश्चित आयतन में इलेक्ट्रॉनों की पैकिंग की एक सीमा होती है। इस सीमा के आ जाने पर कहा जाता है कि इलेक्ट्रॉन 'डीजनरेट अवस्था' में पहुंच गए हैं। डीजनरेट पदार्थ में उत्पन्न दबाव के कारण तारे के निरन्तर सिकुड़ने की प्रक्रिया पर रोक लगती है।

फाउलर के इस निष्कर्ष के मुताबिक श्वेत बौने तारों की संहति कितनी भी हो सकती थी। परन्तु चन्द्रशेखर ने इस तर्क में एक बड़ी खामी ढूंढ निकाली। इलेक्ट्रॉनों को निर्धारित सीमा तक पैक करते चले जाते से उनका ऊर्जा स्तर बढ़ने लगता है; और पर्याप्त उच्च ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉनों की गति प्रकाश के वेग के बराबर होती है। यानी इलेक्ट्रॉन सापेक्ष अवस्था में पहुंच जाते हैं और उनकी ठसाठस पैकिंग के नियम बदल जाते हैं। इसे 'सापेक्षतापूर्ण डीजनरेसी' कहते हैं।

काफी कम संहति वाले तारों में इन बदले हुए नियमों के तहत भी डीजनरेसी की अवस्था प्राप्त हो जाती है। परन्तु बहुत विशाल तारों का आंतरिक तापमान इतना ज़्यादा होता है कि सिकुड़कर घना से घना हो जाने के बावजूद डीजनरेसी सीमा कभी नहीं आती। चन्द्रशेखर ने देखा कि इस सन्दर्भ में संहति की एक निर्णायक सीमा होती है। इस निर्णायक सीमा से कम संहति वाले तारों में एक संतुलित स्थिति बन पाना सम्भव होता है। पर इस सीमा से बड़े तारे में यह संतुलन कभी स्थापित नहीं हो पाता। अब यह बात स्थापित हो चुकी है तथा संहति की इस निर्णायक सीमा को 'चन्द्रशेखर सीमा' कहा जाता है। यह सीमा सूरज की संहति से लगभग 1.4 गुना है।

अलबत्ता इस निष्कर्ष को स्थापित व मान्य होने में कई वर्ष लगे। कारण यह था कि इस निष्कर्ष के प्रति शंका ज़ाहिर करने वालों में एडिंग्टन जैसे प्रतिष्ठित विद्वान भी थे। एडिंग्टन का विचार था कि सापेक्षतापूर्ण डीजनरेसी एक फालतू अवधारणा है। उनके अनुसार तारे की संहति कुछ भी हो; उसे अन्तिम संतुलन बनाने में कोई दिक्कत नहीं आएगी, जैसा कि फाउलर का निष्कर्ष था। एडिंग्टन का सवाल था कि यदि ऐसा न हो, तो उन तारों क्या होगा जो सिकुड़ते ही चले जाएंगे! कैम्ब्रिज में इस प्रकार के प्रतिरोधों के चलते ही एक समय पर चन्द्रा ने अपने अनुसंधान का विषय और स्थान, दोनों बदलने का विचार किया था।

शोध के भावी विषय

तीस के दशक के मध्य में चन्द्रा ने भारत में ही बस जाने की सोची, मगर भारत और पश्चिमी देशों के बीच अनुसंधान की गहरी खाई को पाटना सम्भव न था। लिहाज़ा वे 1937 में शिकागो चले गए, जहां एक ज़बर्दस्त कैरियर उनका इन्तज़ार कर रहा था। शिकागो में वे लगातार ऊंचे पदों पर नियुक्त होते रहे और मृत्युपर्यन्त वहीं रहे। उनकी शोध-रुचियों में विकिरणात्मक स्थानांतरण, तरल- गति व तरल चुम्बकीय अस्थिरता, घूर्णन करते द्रवों की संतुलन संरचना, तारों का गति विज्ञान, सामान्य सापेक्षता, श्याम विवर तथा गुरुत्वाकर्षण तरंगों के टकराव आदि रहे। एक उदाहरण से उनकी कार्यशैली स्पष्ट हो जाएगी।

मैं उनसे पहली मर्तबा 1962 में वारसा में मिला था। उस वक्त मैं एक शोध छात्र था और सापेक्षता व गुरुत्वाकर्षण विषय के एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लेने गया था। उस सम्मेलन में चन्द्रशेखर एक विशेषज्ञ की हैसियत से नहीं, बल्कि सामान्य सापेक्षता सिद्धांत के बारे में कुछ सीखने तथा इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण शोध विषयों की जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से शरीक हुए थे। उस समय वे पचास से कुछ अधिक के थे। यह वह उम्र होती है जब अधिकतर वैज्ञानिक अपने मौलिक शोध-कार्य में सिमटने लगते हैं। मगर चन्द्रा के साथ ऐसा नहीं था। आगे चलकर उन्होंने जो कार्य किए उनमें उनकी कड़ी मेहनत और मौलिकता के दर्शन होते हैं। इस उम्र में वे नए विषयों में शोधकार्य करना शुरू कर रहे थे।

अस्सी के दशक में उन्होंने *श्याम विवर का गणितीय सिद्धांत* नामक विस्तृत पुस्तक लिखी। विडम्बना देखिए कि चन्द्रा के शोध निष्कर्षों को लेकर एडिंग्टन की आपत्ति इस बात पर थी कि 'चन्द्रशेखर सीमा' से बड़ा तारा सिकुड़ता ही जाएगा और अन्ततः इतना घना (श्याम विवर) हो जाएगा कि उसके गुरुत्वाकर्षण की वजह से विकिरण (मसलन प्रकाश) भी उसमें से नहीं निकल पाएगा। यदि एडिंग्टन ने इस निष्कर्ष को गम्भीरता से लिया होता तो वे श्याम विवर की उपस्थिति प्रतिपादित कर चुके होते।

चन्द्रा की कार्यशैली कुछ इस प्रकार की थी : नया विषय सीखो, उच्च स्तर का मौलिक योगदान दो, और फिर एक श्रेष्ठ पुस्तिका लिख डालो..... फिर नए विषय में घुसकर यही प्रक्रिया दोहराते चलो। उनकी सबसे ताज़ा रचना में न्यूटन के ग्रन्थ *प्रिन्सिपिया* में प्रतिपादित निष्कर्षों को आम लोगों को समझाने का प्रयास किया गया है। 1992 में चन्द्रा, 'खगोलशास्त्र व खगोल भौतिकी के अन्तर्विश्वविद्यालय केन्द्र (पुणे)' आए थे। यहां पर उन्होंने इसी विषय पर व्याख्यान देते हुए बताया था कि उन्हें आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके उनके द्वारा की गई गणनाओं के बजाय न्यूटन के ज्यामितीय प्रतिपादन ज़्यादा संतोषदायक लगते हैं। चन्द्रा; कला व विज्ञान दोनों में सौन्दर्य, सृजनात्मकता और श्रेष्ठ कार्य के कायल थे। पुणे में अपने व्याख्यान में उन्होंने क्लॉड मोनेट की चित्रकला और सामान्य सापेक्षता के बीच तुलना प्रस्तुत की थी। इससे पहले भी 1975 में सृजनात्मकता की भूमिका के सन्दर्भ में वे न्यूटन के साथ शेक्सपियर व बीथोवन पर चर्चा कर चुके थे।

पुरस्कार व सम्मान

चन्द्रा को मिले बेशुमार सम्मानों में 1993 का भौतिकी नोबल पुरस्कर, रॉयल सोसाइटी की सदस्यता, पद्म विभूषण, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी का वेणु बप्पा स्मृति पुरस्कार, रॉयल एस्ट्रॉनॉमिकल सोसाइटी का स्वर्ण पदक, रॉयल सोसाइटी का कॉप्ली पदक, वग़ैरह....वग़ैरह शामिल हैं। पूरी सूची तो शायद बहुत लम्बी होगी। नोबल पुरस्कार उन्हें बहुत देर से मिला। कई वैज्ञानिकों की राय में तो यह पुरस्कार उन्हें दो दशक पूर्व श्वेत बौनों सम्बंधी शोध के लिए दे दिया जाना चाहिए था।

चन्द्रा की जीवन का वृत्तान्त *एस्ट्रोफिज़िकल जर्नल* में उनके महत्वपूर्ण योगदान के ज़िक्र के बिना पूरा नहीं हो सकता। वे 1952 से 1971 तक इस पत्रिका के सम्पादक रहे। इस दौरान उन्होंने इस पत्रिका को खगोल भौतिकी की प्रतिष्ठित पत्रिका बना दिया। इस पत्रिका को स्थापित करने में उनका एकाग्र और कभी-कभी एकहस्त कार्य एक अनुकरणीय उदाहरण है। *(स्रोत फीचर्स)*

● ● ● ● ●